वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते।
गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते।।२९।।

वेपथुः=कम्प; **च**=तथा; **शरीरे**=शरीर में; **मे**=मेरे; **रोमहर्षः**=रोमांच; **च**=भी; **जायते**=होता है; **गाण्डीवम्**=गाण्डीव धनुष; **स्रंसते**=गिरता है; **हस्तात्**=हाथ से; **त्वक् च एव**=त्वचा भी; **परिदह्यते**=जलती है।

अनुवाद

मेरे सम्पूर्ण शरीर में कम्प तथा रोमांच हो रहा है; गाण्डीव धनुष हाथ से गिरा जाता है और त्वचा भी जलती है।।२९।।

तात्पर्य

शरीर में होने वाले कम्प तथा रोमांच दो प्रकार के हैं। इनकी अभिव्यक्ति भगवद्भाव में विभोरता होने पर अथवा भवबंधन में महाभय की प्रप्ति होने पर होती है। परतत्त्व-साक्षात्कार हो जाने पर भय शेष नहीं रहता। अतः इस समय अर्जुन में ये लक्षण प्राणहानि के प्राकृत भयवश उत्पन्न हुए हैं। अन्य लक्षणों से भी यह स्पष्ट है। वह इतना अधीर हो गया कि उसका त्रिभुवन विश्रुत गाण्डीव धनुष तक उसके हाथ से गिरा जा रहा था तथा आन्तरिक दाह के कारण उसे अपनी त्वचा भी जलती प्रतीत हो रही थी। ये सब लक्षण देहात्मबुद्धि के परिणाम हैं।

न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः।
निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव।।३०।।

न च शक्नोमि=और न ही मैं समर्थ हूँ; **अवस्थातुम्**=स्थित रहने में; **भ्रमति इव**=भ्रमित सा हो रहा हूँ; **च**=तथा; **मे**=मेरा; **मनः**=मन; **निमित्तानि च**=लक्षणों को भी; **पश्यामि**=देखता हूँ; **विपरीतानि**=विपरीत; **केशव**=हे केशव।

अनुवाद

यहाँ और अधिक खड़े रहने में भी मैं समर्थ नहीं हूँ, क्योंकि अपने को भूलता सा जा रहा हूँ तथा मेरा मन भी भ्रमित हो रहा है। हे केशव! भविष्य में भी मुझे केवल अमंगल ही अमंगल दृष्टिगोचर होता है।।३०।।

तात्पर्य

अति अधीर होने से अर्जुन युद्ध-भूमि में स्थित रहने में असमर्थ हो गया। यही नहीं, मन की दुर्बलतावश उसे अपना विस्मरण सा होता जा रहा था। विषय में प्रबल आसक्ति मनुष्य को मोहमय स्थिति में पहुँचा देती है। **भयं द्वितीयाभिनिवेशतः**, जो प्राकृत परिस्थितियों के अत्यधिक वशीभूत रहते हैं उन में ही ऐसा भय और अभिनिवेश होता है। अर्जुन को युद्धभूमि में केवल दुःख की प्रतीति हो रही थी, मानो शत्रु-विजय करने पर भी वह प्रसन्न नहीं हो सकेगा। **निमित्त** शब्द अर्थपूर्ण है। जीवन में निराशा ही निराशा देखने पर मनुष्य विचार करता है, 'मैं यहाँ क्यों हूँ?'